वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 302
ISBN 978-93-80353-73-9

भगवान शांतिनाथ

–: रचयित्री :–

गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी

भगवान शांतिनाथ जन्म, दीक्षा व निर्वाणकल्याणक दिवस–ज्येष्ठ कृ. चतुर्दशी, 11 जून 2010 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित "प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर वर्ष" के अन्तर्गत भगवान शांति-कुंथु-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग प्रतिमाओं एवं तीनलोक के जिनबिम्बों के प्रथम प्रतिष्ठापना दिवस के शुभ अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र., फोन नं.- (01233) 280184, 292943
Website : www.jambudweeep.org
E-mail : ravindrajain@jambudweeep.org

COURTESY—JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

द्वितीय संस्करण	वीर निर्वाण संवत् 2537	मूल्य
2200 प्रतियाँ	फाल्गुन शु. पंचमी	12/-रुपये
	10 मार्च 2011	

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

–: निर्देशन :–

धर्मदिवाकर पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज

–: सम्पादक :–

कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण (सन् 2008)-2200 प्रतियाँ प्रकाशित

कम्पोजिंग-ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

आद्य वक्तव्य

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

"भगवान शांतिनाथ" नामक प्रस्तुत पुस्तक में पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने जैनशासन के 16वें तीर्थंकर भगवान शांतिनाथ के सम्पूर्ण जीवनवृत्त का वर्णन अति संक्षेप में दर्शाया है तथा उनके पूर्ववर्ती 11 भवों के संक्षिप्त कथानक द्वारा यह भी प्रदर्शित किया है कि वे किस प्रकार राजा श्रीषेण की पर्याय से अपने जीवन का उत्थान करते हुए 12वें भव में तीर्थंकर शांतिनाथ पद को प्राप्त हुए हैं।

आज से करोड़ों वर्ष पूर्व कुरुजांगल देश की हस्तिनापुर नगरी में महाराज विश्वसेन और महारानी ऐरावती से जन्में भगवान शांतिनाथ ने चक्रवर्ती और कामदेव पद प्राप्त करके पहले तो गृहस्थावस्था में 96 हजार रानियों के साथ इन्द्रियविषयों का सुखोपभोग कर चक्ररत्न के द्वारा विजय प्राप्त छह खण्ड पृथ्वी पर राज्य संचालन किया, पुनः सम्पूर्ण वैभव का त्याग करके जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर घोर तपश्चरण के द्वारा कर्मों को नष्ट करके मोक्षपद को प्राप्त कर लिया था। उनके द्वारा प्रतिपादित अमूल्य सिद्धान्तों का वर्णन भी इस पुस्तक में आपको संक्षिप्तरूप में प्राप्त होगा।

पुस्तक की रचयित्री पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी का जन्म 22 अक्टूबर 1934 को शरदपूर्णिमा के दिन जिला बाराबंकी-उत्तरप्रदेश के टिकैतनगर कस्बे में लाला श्री छोटेलाल जैन की धर्मपत्नी मोहिनी देवी की कुक्षि से हुआ था। सन् 1953 में शरदपूर्णिमा के दिन ही सप्तम प्रतिमारूप ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण करके 18 वर्ष की अल्प आयु में गृहत्याग करने वाली कन्या मैना ने सन् 1953 में चैत्र कृष्णा एकम् के दिन महावीर जी अतिशय क्षेत्र पर भारत गौरव आचार्यश्री देशभूषण महाराज से क्षुल्लिका दीक्षा धारणकर 'वीरमती' नाम प्राप्त किया पुनः सन् 1956 में प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज की प्रेरणा से उनके प्रथम पट्टशिष्य आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज से माधोराजपुरा (राज.) में आर्यिका दीक्षा धारणकर "ज्ञानमती" नाम से प्रसिद्ध हुईं।

अपने दीर्घकालीन संयमी जीवन में पूज्य ज्ञानमती माताजी ने गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि के रूप में जहाँ सम्पूर्ण विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है, वहीं 250 से अधिक ग्रंथों का लेखन करके अनेक तीर्थों का जीर्णोद्धार-विकास की प्रेरणा देकर, अनेक रथों का भारत भ्रमण करवाकर तथा कई राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय महोत्सव, संगोष्ठी आदि आयोजित करवाकर एक कीर्तिमान स्थापित किया है।

आपकी प्रेरणा से सन् 1972 में स्थापित दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के द्वारा हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण हुआ है, जिसके अन्तर्गत व्यापक स्तर पर अनेक संस्थाओं का संचालन किया जाता है।

उसी शृँखला में "वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला" के द्वारा सैकड़ों ग्रंथ लाखों की संख्या में प्रकाशित हो चुके हैं तथा प्रकाशन का कार्य निरन्तर चल रहा है। इसी क्रम में ग्रंथमाला का यह पुष्प पाठकों तक पहुँच रहा है। जैनधर्म के 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के 2885वें जन्मकल्याणक महोत्सव के शुभ अवसर पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से आयोजित "विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन" का उद्घाटन 21 दिसम्बर 2008 को भारत की महामहिम राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा जी पाटिल के करकमलों द्वारा जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में सम्पन्न हुआ, इस सम्मेलन को पूरे एक वर्ष तक भारत के विभिन्न स्थानों में आयोजित किया गया। पुस्तक में प्रकाशित परिचय, स्तुति, भजन आदि के माध्यम से आप सभी भगवान शांतिनाथ के अनुपम जीवनवृत्त से परिचित हों, यही शुभेच्छा है।

भगवान शांतिनाथ एक दृष्टि में

जन्मभूमि	–हस्तिनापुर (जि.मेरठ) उ.प्र.		
पिता	–महाराजा विश्वसेन	**माता**	–महारानी ऐरावती
वर्ण	–क्षत्रिय	**वंश**	–कुरुवंश
देहवर्ण	–तप्त स्वर्ण सदृश	**चिन्ह**	–हरिण
आयु	–एक लाख वर्ष	**अवगाहना**	–एक सौ साठ हाथ
गर्भ	–भाद्रपद कृ. 7	**जन्म**	–ज्येष्ठ कृ. 14
दीक्षा	–ज्येष्ठ कृ. 14	**दीक्षा वन**	–सहस्राम्रवन

दीक्षा एवं केवलज्ञान वृक्ष–नंद्यावर्त वृक्ष

प्रथम आहार –मंदिरपुर के राजा सुमित्र द्वारा (खीर)

केवलज्ञान	–पौष शु.10	**मोक्ष**	–ज्येष्ठ कृ. 14

मोक्ष स्थल –सम्मेदशिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर	–श्री चक्रायुध आदि 36	**मुनि**	–बासठ हजार
गणिनी	–आर्यिका हरिषेणा	**आर्यिका**	–साठ हजार तीन सौ
श्रावक	–दो लाख	**श्राविका**	–चार लाख
जिनशासन यक्ष	–गरुड़देव	**यक्षी**	–महामानसी देवी

भगवान शांतिनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2535 से पौन पल्य 65, 86, 535 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

1. **ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथाय जगत्शांतिकराय सर्वोपद्रवशांतिं कुरु कुरु ह्रीं नमः।**
2. **ॐ ह्रीं विश्वशांतिकराय श्रीशांतिनाथाय नमः।**
3. **ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतिनाथाय नमः।**

भगवान शांतिनाथ

अपराजित महामंत्र

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।।

अरिहंतों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो और लोक में सर्व साधुओं को नमस्कार हो। इसे पंच नमस्कार मंत्र, महामंत्र और अपराजित मंत्र भी कहते हैं।

एसो पंचणमोयारो, सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।।

यह पंच नमस्कार मंत्र सर्व पापों का नाश करने वाला है और सर्वमंगलों में पहला मंगल है। अतः इस मंत्र को प्रतिदिन जपना चाहिए।

''कर्मारातीन् जयतीति जिनः'' जो कर्मरूपी शत्रुओं को जीत लेता है वह 'जिन' है और **'जिनो देवता अस्येति जैनः'** जिन हैं देवता जिसके वह 'जैन' कहलाता है। **'संसार दुःखतः सत्वान् यो उत्तमे सुखे धरतीति धर्मः'** जो संसार के दुःख से जीवों को निकालकर उत्तमसुख में पहुँचा देता है वह धर्म है। इस प्रकार से जिनदेव के अनुयायी का धर्म 'जैनधर्म' है अथवा जिनदेव द्वारा कथित धर्म 'जैनधर्म' है। यह धर्म प्राणिमात्र का कल्याण करने वाला है अतः इसे 'सार्व धर्म' या 'सर्वोदय तीर्थ' भी कहते हैं। यह धर्म अनादिनिधन है और प्राकृतिक है।

यह धर्म चार प्रकार से वर्णित है—जीवदया—अहिंसा धर्म, रत्नत्रय धर्म, दशलक्षण धर्म और वस्तुस्वभावधर्म।

तीर्थंकर परम्परा—

''संसारस्तीर्यते येन, असौ तीर्थः प्रकीर्त्यते।'' संसार समुद्र जिससे तिरा जाता

है—पार किया जाता है, वह 'तीर्थ' है। इस धर्म के द्वारा ही संसार समुद्र तिरा जाता है—पार किया जाता है अतः यह धर्म ही तीर्थ है। इस धर्मतीर्थ के कर्ता—करने वाले 'तीर्थंकर कहलाते हैं।

जैनधर्म में—जैनशासन में ऐसे तीर्थंकर अनंतानंत हो चुके हैं और भविष्य में भी अनंतानंत होवेंगे।

तिलोयपण्णत्ति में लिखा है कि ''ये अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल अनंत होते रहते हैं। असंख्यातों अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी के बीत जाने पर एक 'हुंडावसर्पिणी' काल आता है।'' इससे स्पष्ट है कि प्रत्येक अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी में चौबीस-चौबीस तीर्थंकर होने से असंख्यातों चौबीसी हो चुकी हैं अतः भगवान महावीर स्वामी जैनधर्म के संस्थापक हैं, यह कथन कथमपि उचित नहीं है।

वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों के नाम—

श्री ऋषभदेव, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ, पद्मप्रभनाथ, सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभनाथ, पुष्पदंतनाथ, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वासुपूज्यनाथ, विमलनाथ, अनन्तनाथ, धर्मनाथ, शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रतनाथ, नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी। इस भरतक्षेत्र में उत्पन्न हुए इन चौबीस तीर्थंकरों को नमस्कार हो। ये ज्ञानरूपी फरसे से भव्यजीवों के संसाररूपी वृक्ष को छेदने वाले हैं।

इन तीर्थंकर भगवन्तों द्वारा प्रतिपादित धर्मों में जीवदया—अहिंसा धर्म ही प्रधान है क्योंकि यह सभी धर्मों का मूल है।

कहा भी है—

'अहिंसा परमो धर्मः यतो धर्मस्ततो जयः'।

अहिंसा सर्वश्रेष्ठ परम धर्म है और जहाँ धर्म है, वहाँ सर्व प्रकार से जय होती है।

पाँच अणुव्रत—इस अहिंसा धर्म के पालन हेतु श्रावक-गृहस्थ के लिए पाँच अणुव्रत माने हैं—अहिंसाणुव्रत, सत्याणुव्रत, अचौर्याणुव्रत, ब्रह्मचर्याणुव्रत और परिग्रहपरिमाणाणुव्रत।

संकल्पपूर्वक—अभिप्रायपूर्वक—जानबूझकर दो इंद्रिय आदि त्रसजीवों को नहीं मारना अहिंसाणुव्रत है।

हिंसा के चार भेद हैं—संकल्पीहिंसा, आरंभीहिंसा, उद्योगिनी हिंसा और विरोधिनी हिंसा। अभिप्रायपूर्वक जीवों की हिंसा संकल्पी हिंसा है। गृहस्थाश्रम में चूल्हा

जलाना, पानी भरना आदि कार्यों में जो हिंसा होती है, वह आरंभीहिंसा है। व्यापार में जो यत्किंचित् हिंसा होती है वह उद्योगिनी हिंसा है और धर्म, देश, धर्मायतन आदि की रक्षा के लिए जो युद्ध में हिंसा होती है, वह विरोधिनी हिंसा है। इन चारों ही हिंसा में गृहस्थ लोग मात्र संकल्पी हिंसा का ही त्याग कर सकते हैं, शेष तीनों हिंसा में सावधानी और विवेक अवश्य रखते हैं इसीलिए यह व्रत श्रावकों का 'अहिंसाणुव्रत' कहलाता है।

ऐसे ही स्थूलरूप से झूठ का त्याग करना सत्याणुव्रत है। इस व्रती को ऐसा सत्य भी नहीं बोलना चाहिए कि जिससे धर्म की हानि हो या किसी पर विपत्ति आ जावे अथवा किसी जीव का घात हो जावे।

पर के धन की चोरी का त्याग करना अचौर्याणुव्रत है।

परस्त्री सेवन का त्याग करना ब्रह्मचर्याणुव्रत है। स्त्रियों के लिए पर पुरुष का त्याग करना होता है जैसे कि सती सीता ने अपने इस ब्रह्मचर्याणुव्रत—शीलव्रत के प्रभाव से अग्नि को जल बना दिया था।

अपने धन-धान्य का परिमाण करके इच्छाओं को सीमित करना परिग्रह परिमाण अणुव्रत है। इन पाँचों व्रतों के पालन करने वाले अणुव्रती कहलाते हैं।

ये अणुव्रती गृहस्थ इस भव में सदा सुखी एवं यशस्वी होते हैं और परभव में नियम से स्वर्ग के वैभव को प्राप्त करते हैं।

पाँच महाव्रत—जो महापुरुष हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पाँचों पापों का पूर्णरूपेण त्याग कर देते हैं वे महाव्रती कहलाते हैं। ये महामुनि, महासाधु, महर्षि, दिगम्बर मुनि आदि कहलाते हैं।

युग की आदि में अयोध्या में भगवान ऋषभदेव जन्मे थे। ये इक्ष्वाकुवंशीय कहलाते हैं। इन भगवान ने कल्पवृक्ष के अभाव में प्रजा के लिए असि, मषि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प इन षट् क्रियाओं का उपदेश देकर जीने की कला सिखाई। विदेहक्षेत्र के अनुसार क्षत्रिय, वैश्य आदि वर्ण व्यवस्था बनाई। महामंडलीक राजा बनाकर पुनः उनके आश्रित अनेक राजा-महाराजा बनाकर 'राजनीति' का उपदेश दिया। अनन्तर जैनेश्वरी दीक्षा लेकर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमार्ग का उपदेश दिया।

जैन धर्म है, जाति नहीं—जैन धर्म है, जाति नहीं है। जाति, गोत्र और धर्म इन तीनों को समझना अति आवश्यक है। वर्तमान में जैनधर्मानुयायियों में चौरासी जातियाँ सुनी जाती हैं। अग्रवाल, पोरवाड़, खंडेलवाल, पद्मावती पुरवाल, परवार, लमेचू,

चतुर्थ, पंचम, बघेरवाल, शेतवाल आदि। गोत्रों में प्रत्येक जाति के गोत्र अलग-अलग हैं। जैसे कि अग्रवाल में गोयल, सिंगल, मित्तल आदि। खंडेलवाल में सेठी, रांवका, गंगवाल आदि।

अतएव जाति और गोत्र अलग हैं तथा धर्म अलग है, फिर भी कुछ व्यवस्था की दृष्टि से 'जनगणना' में जाति के कॉलम में जैन लिखाना आवश्यक हो गया है।

मेरा तो यही कहना है कि सभी जैनकुल में जन्में लोगों को अपने नाम के साथ 'जैन' लगाना अति आवश्यक है। प्रायः मारवाड़ में और दक्षिण में श्रावक नाम के साथ गोत्र लगाते हैं 'जैन' नहीं लगाते हैं तो जैन जनगणना में जैन अतीव अल्प दिखते हैं।

जैनधर्म स्वतंत्र धर्म है—यह जैनधर्म एक स्वतंत्र धर्म है न कि किसी धर्म की शाखा, इसके लिए भी प्रबल प्रमाण हैं।

षट्दर्शन के नामों में—

जैना मीमांसका बौद्धाः, शैवा वैशेषिका अपि।
नैयायिकाश्च मुख्यानि, दर्शनानीह सन्ति षट्।।

जैन, मीमांसक, बौद्ध, शैव, वैशेषिक और नैयायिक ये छह प्रमुख दर्शन इस देश में हैं।

वायुपुराण में भी लिखा है—

उपासनाविधिश्चोक्तः, कर्मसंशुद्धिचेतसाम्।
ब्राह्मं शैवं वैष्णवं च, सौरं शाक्तं तथार्हतम्।।
षट्दर्शनानि चोक्तानि, स्वभावनियतानि च।
एतदन्यच्च विविधं, पुराणेषु निरूपितम्।।

इन छहों दर्शनवालों की उपासना विधि भी स्वतंत्र है और ये छहों दर्शन स्वभाव से निश्चित-स्वतंत्र हैं।

अतएव इस जैनधर्म को हिन्दूधर्म की शाखा नहीं माना जा सकता।

श्री ऋषभदेव आदि सभी तीर्थंकर भगवान "अहिंसा के अवतार" माने गये हैं।

इन्हीं तीर्थंकर परम्परा में सोलहवें तीर्थंकर भगवान शांतिनाथ ने हस्तिनापुर में जन्म लिया है। ये पाँचवें चक्रवर्ती एवं बारहवें कामदेव ऐसे तीर्थंकर, चक्रवर्ती और कामदेव इन से तीन पद के धारक हुए हैं। इनके नामस्मरण से भी शांति होती है। उन्हीं का जीवन चरित्र आप पढ़ेंगे—

तीर्थंकर शान्तिनाथ

स्वदोषशान्त्यावहितात्मशान्तिः, शान्तेर्विधाता शरणं गतानाम्।
भूयाद् भवक्लेशभयोपशान्त्यै, शान्तिर्जिनो मे भगवांच्छरण्यः।।

अपने दोषों को शांत करके जिन्होंने पूर्ण शांति प्राप्त कर ली है, जो शांति के विधाता-ब्रह्मा अथवा कर्ता हैं, जिनकी मैंने शरण ली है ऐसे शांतिनाथ जिनेन्द्र भगवान मेरे संसाररूपी क्लेश के भयों की शांति के लिए होवें।

ये शांतिनाथ भगवान कभी हम और आप जैसे संसारी थे उन्होंने ग्यारह भवों तक अपने पुरुषार्थ के बल से अपने आपको शांतिनाथ तीर्थंकर बनाया है। इसे ही आप पढ़ेंगे—

(१) राजाश्रीषेण—इसी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में रत्नपुर नाम का नगर है। उस नगर का राजा श्रीषेण था, उसके सिंहनन्दिता और अनिन्दिता नाम की दो रानियाँ थीं। इन दोनों के इन्द्रसेन और उपेन्द्रसेन नाम के दो पुत्र थे। उसी नगर की सत्यभामा नाम की एक ब्राह्मण कन्या अपने पति को दासी पुत्र जानकर उसे त्याग कर राजा के यहाँ अपने धर्म की रक्षा करते हुए रहने लगी थी। किसी एक दिन राजा श्रीषेण ने अपने घर पर हुए आदित्यगति और अरिंजय नाम के दो चारण मुनियों को पड़गाहन कर स्वयं आहारदान दिया और पंचाश्चर्य प्राप्त किये तथा दश प्रकार के कल्पवृक्षों के भोग प्रदान करने वाली उत्तरकुरु भोगभूमि की आयु बाँध ली। दान देकर राजा की दोनो रानियों ने तथा दान की अनुमोदना से सत्यभामा ने भी उसी उत्तम भोगभूमि की आयु बाँध ली सो ठीक ही है क्योंकि साधुओं के समागम से क्या नहीं होता?

किसी समय इन्द्रसेन की रानी श्रीकांता के साथ अनन्तमति नाम की एक साधारण स्त्री आई थी उसके साथ उपेन्द्रसेन का स्नेह समागम हो गया। इस निमित्त को लेकर बगीचे में दोनों भाईयों का युद्ध शुरू हो गया। राजा इस युद्ध को रोकने में असमर्थ रहे, साथ ही अत्यन्त प्रिय अपने इन पुत्रों के अन्याय को सहन करने में असमर्थ रहे अतः वे विषपुष्प सूंघ कर मर गये, वही विषपुष्प सूंघ कर दोनों रानियां और सत्यभामा भी प्राणरहित हो गईं।

(२) भोगभूमिज आर्य—धातकी खंड के पूर्वार्ध भाग में जो उत्तरकुरु नाम की उत्तम भोगभूमि है उसमें राजा तथा सिंहनन्दिता दोनों दम्पत्ति हुए और अनिन्दिता नाम

की रानी आर्य तथा सत्यभामा उसकी स्त्री हुई, इस प्रकार वे सब वहाँ भोगभूमि के सुखों को भोगते हुए सुख से रहने लगे।

(३) श्रीप्रभदेव—राजा श्रीषेण का जीव भोगभूमि से चलकर सौधर्म स्वर्ग के श्रीप्रभ विमान में श्रीप्रभ नाम का देव हुआ। रानी सिंहनन्दिता का जीव उसी स्वर्ग के श्रीनिलय विमान में विद्युतप्रभा नाम की देवी हुई। सत्यभामा ब्राह्मणी और अनिन्दिता नाम की रानी के जीव क्रमशः विमलप्रभ विमान में शुक्लप्रभा नाम की देवी और विमलप्रभ नाम के देव हुए।

(४) विद्याधर अमिततेज—विजयार्ध के राजा ज्वलनजटी के पुत्र अर्ककीर्ति थे। उस अर्ककीर्ति की ज्योतिर्माला रानी से राजा श्रीषेण का जीव श्रीप्रभ विमान से स्वर्ग से आकर अमिततेज नाम का पुत्र हुआ। सिंहनन्दिता का जीव अमिततेज की ज्योतिःप्रभा नाम की स्त्री हुई। देवी अनिन्दिता का जीव श्रीविजय हुआ और सत्यभामा का जीव अमिततेज की बहन सुतारा हुआ। यह अमिततेज विद्याधर समस्त पर्वों में उपवास करता था। दोनों श्रेणियों का अधिपति होने से वह सब विद्याधरों का राजा था। किसी एक दिन दमवर नामक चारण ऋद्धिधारी मुनि को विधिपूर्वक आहारदान देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये।

(५) रविचूल देव—किसी समय अमिततेज और श्रीविजय दोनों ने मुनि के मुख से अपनी आयु एक मास मात्र है, ऐसा जानकर अपने पुत्रों को राज्य दे दिया और बड़े आदर से अष्टाह्निका पूजा की तथा नन्दन नामक मुनि के समीप चन्दन वन में सब परिग्रह त्याग कर प्रायोपगमन सन्यास धारण कर लिया। अन्त में समाधिमरण कर शुद्ध बुद्धि का धारक अमिततेज तेरहवें स्वर्ग के नन्द्यावर्त विमान में रविचूल नाम का देव हुआ और श्रीविजय भी इसी स्वर्ग के स्वस्तिक विमान में मणिचूल नाम का देव हुआ।

(६) अपराजित बलभद्र—वहाँ के भोगों का अनुभव करके रविचूल नाम का देव नन्द्यावर्त विमान से च्युत होकर जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा स्तिमित सागर और उनकी रानी वसुन्धरा के अपराजित नाम का पुत्र हुआ। मणिचूल देव भी स्वस्तिक विमान से च्युत होकर उसी राजा की अनुमति नाम की रानी के अनन्तवीर्य नाम का लक्ष्मी सम्पन्न पुत्र हुआ। ये दोनों भाई बलभद्र और अर्द्धचक्री नारायण पद के धारक हुए तथा दमितारि नाम के प्रतिनारायण को मार कर चक्ररत्न को प्राप्त कर बहुत काल तक राज्य के उत्तम सुखों का अनुभव करते रहे।

किसी समय अनन्तवीर्य के मरण से बलभद्र अपराजित पहले तो बहुत दुःखी हुए, जब प्रबुद्ध हुए तब अनन्तसेन नामक पुत्र के लिए राज्य देकर यशोधर मुनिराज के समीप दीक्षा धारण कर ली।

(७) अच्युत स्वर्ग में इंद्र—वे अपराजित महामुनि तीसरा अवधिज्ञान प्राप्त कर अत्यन्त शान्त हो गये और तीस दिन का सन्यास लेकर अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुए।

इधर अनन्तवीर्य नारायण नरक गया था, वहाँ पर जाकर धरणेन्द्र ने उसे समझा-बुझाकर सम्यक्त्व ग्रहण कराया। उसके प्रभाव से वह अनन्तवीर्य नरक से निकलकर जम्बूद्वीपसम्बन्धी भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी के राजा मेघवाहन की रानी मेघमालिनी से मेघनाद नाम का पुत्र हो गया। कालान्तर में दीक्षा लेकर आयु के अन्त में मरकर तपश्चरण के प्रभाव से अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र हो गये और इन्द्र के साथ उत्तम प्रीति रखकर स्वर्ग सुख का अनुभव करने लगे।

(८) वज्रायुध चक्रवर्ती—अपराजित का जीव जो पहले इन्द्र हुआ था वह पहले च्युत हुआ और इसी जम्बूद्वीप सम्बन्धी पूर्व विदेह क्षेत्र के रत्नसंचय नामक नगर में राजा क्षेमंकर तीर्थंकर की कनकचित्रा नाम की रानी से मेघ की बिजली के समान पुण्यात्मा श्रीमान 'वज्रायुध नाम का पुत्र हुआ। इस पुत्र की उत्पत्ति में आधान, प्रीति, सुप्रीति, धृति, मोद, प्रियोद्भव आदि क्रियायें की गई थीं। जिस प्रकार चन्द्रमा शुक्लपक्ष को पाकर कान्ति तथा चन्द्रिका से सुशोभित होता है, उसी प्रकार वह वज्रायुध भी तरुण अवस्था पाकर राज्यलक्ष्मी तथा लक्ष्मीमती नामक स्त्री से सुशोभित हो रहा था। उन वज्रायुध और लक्ष्मीमती के अनन्तवीर्य (प्रतीन्द्र) का जीव सहस्रायुध नाम का पुत्र हुआ। इस प्रकार राजा क्षेमंकर पुत्र-पौत्र आदि परिवार से परिवृत होकर राज्य करते थे।

किसी समय क्षेमंकर तीर्थंकर वज्रायुध का राज्याभिषेक करके लौकान्तिक देवों द्वारा स्तुति को प्राप्त होते हुए तपोवन को चले गये और तपश्चरण के प्रभाव से केवलज्ञान को प्राप्त कर बारह सभाओं को दिव्यध्वनि द्वारा सन्तुष्ट करने लगे।

इधर वज्रायुध के यहाँ चक्ररत्न की उत्पत्ति हो गई और वे चक्रवर्ती हो गये। दिग्विजय करके षट्खंड पृथ्वी को जीतकर सार्वभौम राज्य करने लगे।

किसी समय नाती के केवलज्ञान का उत्सव देखने से वज्रायुध चक्रवर्ती को भी आत्मज्ञान हो गया जिससे उन्होंने सहस्रायुध पुत्र को राज्य देकर क्षेमंकर तीर्थंकर के

समीप पहुँचकर दीक्षा धारण कर ली। दीक्षा के बाद ही उन्होंने सिद्धिगिरि पर्वत पर जाकर एक वर्ष के लिये प्रतिमायोग धारण कर लिया। उनके चरणों का आश्रय पाकर सर्पों की बहुत सी वामियाँ तैयार हो गईं सो ठीक ही है क्योंकि महापुरुष चरणों में लगे हुए शत्रुओं को भी बढ़ाते हैं। उनके शरीर के चारों तरफ सघनरूप से जमी हुई लतायें भी मानों उनके परिणामों की कोमलता को प्राप्त करने के लिए उन मुनिराज के पास जा पहुँची थीं।

(९) अहमिंद्र—इधर वज्रायुध के पुत्र सहस्रायुध को भी किसी कारण से वैराग्य हो गया। उन्होंने अपना राज्य शतबली को दे दिया, सब प्रकार की इच्छाएँ छोड़ दीं और पिहितास्रव नाम के मुनिराज के पास उत्तम संयम धारण कर लिया। जब पिता वज्रायुध मुनि का एक वर्ष का योग समाप्त हो गया तब वे सहस्रायुध मुनि उन्हीं के समीप जा पहुँचे। पिता-पुत्र दोनों ने चिरकाल तक दुःसह तपस्या की। अन्त में वे वैभार पर्वत के अग्रभाग पर जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने शरीर से स्नेह रहित हो सन्यास मरण किया और ऊर्ध्व ग्रैवेयक के नीचे के सौमनस नामक विमान में बड़ी ऋद्धि के धारक अहमिन्द्र हुए।

(१०) राजा मेघरथ—इसी जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती नाम का देश है, उसकी पुंडरीकिणी नगरी में राजा घनरथ राज्य करते थे, उनकी मनोहरा नाम की सुन्दर रानी थी। वज्रायुध का जीव ग्रैवेयक से च्युत होकर उन्हीं दोनों के मेघरथ नाम का पुत्र हुआ। उसके जन्म के पहले गर्भाधान आदि क्रियायें हुई थीं। उन्हीं घनरथ राजा की मनोरमा नाम की दूसरी रानी से सहस्रायुध का जीव (अहमिन्द्र) दृढ़रथ नाम का पुत्र हो गया। राजा घनरथ ने तरुण होने पर मेघरथ का विवाह प्रियमित्रा और मनोरमा के साथ किया था और दृढ़रथ का विवाह सुमतिदेवी से किया था। इस प्रकार पुत्र-पौत्र आदि सुख के समस्त साधनों से युक्त राजा घनरथ सिंहासन पर बैठकर इन्द्र की लीला धारण कर रहे थे।

इसी बीच में प्रियमित्रा पुत्रवधु की सुषेणा नाम की दासी घनतुंड नामक मुर्गा लाकर दिखलाती हुई बोली कि यदि दूसरों के मुर्गे इसे जीत लें तो मैं एक हजार दीनार दूँगी। यह सुनकर छोटी पुत्रवधु की कांचना नाम की दासी एक वज्रतुंड नामक मुर्गा ले आई। दोनों का युद्ध होने लगा, वह युद्ध दोनों मुर्गों के लिए दुःख का कारण था तथा देखने वालों के लिये भी हिंसानन्द आदि रौद्रध्यान कराने वाला था अतः धर्मात्माओं के देखने योग्य नहीं, ऐसा विचार कर राजा घनरथ बहुत से

भव्यजीवों को शान्ति प्राप्त कराने के लिये अपने पुत्र मेघरथ से उन मुर्गों के पूर्व भव पूछने लगे।

अवधिज्ञान के धारक मेघरथ ने बतलाया कि जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र में रत्नपुर नाम का नगर है। उसमें भद्र और धन्य नाम के दो सगे भाई थे। दोनों ही गाड़ी चलाने का काम करते थे। एक दिन दोनों भाई नदी के किनारे बैल के निमित्त लड़ पड़े और मरकर नदी के किनारे श्वेतकर्ण-ताम्रकर्ण नाम के जंगली हाथी हुए। वहाँ भी पूर्व वैर के संस्कार से लड़कर मरे और दोनों भैंसे हुए पुनः लड़कर मरे और मेढ़ा हुए, मेढ़े भी परस्पर में लड़े और ये दोनों मुर्गे हुए हैं। दो विद्याधर हम लोगों से मिलने के लिये यहाँ आये थे और विद्या से इन मुर्गों में प्रविष्ट होकर इन्हें और अधिक शक्तिशाली बना रहे हैं। इस तरह मेघरथ से सब समाचार सुनकर उन विद्याधरों ने अपना स्वरूप प्रकट किया। राजा घनरथ और कुमार मेघरथ की पूजा की तथा गोवर्धन मुनिराज के समीप जाकर दीक्षा ग्रहण कर ली।

उन दोनों मुर्गों ने भी अपना पूर्वभव का सम्बन्ध जानकर परस्पर का बंधा हुआ वैर छोड़ दिया और अन्त में साहस के साथ संन्यास धारण कर लिया एवं भूतरमण तथा देवरमण नामक वन में ताम्रचूल और कनकचूल नाम के भूतजातीय व्यन्तर हुए।

उसी समय वे देव पुंडरीकिणी नगरी में आये और प्रेम से मेघरथ युवराज की पूजा कर अपने मुर्गे के भव को बतलाकर परमोपकारी मान कर कुछ प्रत्युपकार करने की प्रार्थना करने लगे। अन्त में उन दोनों देवों ने कहा कि आप मानुषोत्तर पर्वत के भीतर विद्यमान समस्त संसार को देख लीजिये। हम लोगों के द्वारा आपका कम-से-कम यही उपकार हो जावे। देवों के ऐसा कहने पर कुमार ने जब 'तथास्तु' कहकर स्वीकृति प्रदान कर दी तब देवों ने कुमार को उनके आप्तजनों के साथ अनेक ऋद्धियों से युक्त विमान में बैठाया और आकाशमार्ग में ले जाकर यथाक्रम से चलते-चलते सुन्दर देश दिखलाये।

वे बतलाते जाते थे कि यह पहला भरत क्षेत्र है, यह हैमवत है इत्यादिरूप से सभी क्षेत्र, पर्वतों को दिखलाते हुए मानुषोत्तर पर्वत के भीतर के सभी अकृत्रिम चैत्यालयों की वन्दना करा दी। तदनन्तर बड़े उत्सव से युक्त नगर में वापस आ गये। आचार्य कहते हैं कि जो मनुष्य अपने उपकारी का प्रत्युपकार नहीं करता है, वह गन्धरहित पुष्प के सदृश जीवित भी मृतकवत् है।

घनरथ महाराज तीर्थंकर थे। किसी दिन विरक्त होकर दीक्षित हो गये। इधर मेघरथ महाराज ने दमवर नामक ऋद्धिधारी मुनि को आहारदान देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये। कभी नन्दीश्वर पर्व में महापूजा कर रात्रि में प्रतिमायोग से ध्यान करते थे और इन्द्रों द्वारा पूजा को प्राप्त होते थे। किसी दिन घनरथ तीर्थंकर के समवसरण में धर्मोपदेश को सुनकर संसार, शरीर, भोगों से विरक्त हो गये और अपने पुत्र को राज्य देकर दृढ़रथ भाई और अन्य सात हजार राजाओं के साथ दीक्षित होकर ग्यारह अंग के पाठी हो गये और सोलहकारण भावनाओं से तीर्थंकर नामकर्म का बंध कर लिया।

(११) सर्वार्थसिद्धि के अहमिंद्र—अत्यन्त धीर वीर मेघरथ ने दृढ़रथ के साथ 'नभस्तिलक' पर्वत पर आकर एक महीने का प्रायोपगमन संन्यास धारण कर शरीर छोड़कर सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र पद प्राप्त कर लिया।

(१२) भगवान शांतिनाथ—कुरुजांगल देश की हस्तिनापुर राजधानी में कुरुवंशशिरोमणि राजा विश्वसेन राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम ऐरावती था। अहमिंद्र के जीव (होनहार शान्तिनाथ) के गर्भ में आने के छह महीने पहले से ही इन्द्र की आज्ञा से हस्तिनापुर नगर में माता के आँगन में रत्नों की वर्षा होने लगी और श्री, ह्री, धृति आदि देवियाँ माता की सेवा में तत्पर हो गईं। भादों वदी सप्तमी के दिन भरणी नक्षत्र में रानी ने गर्भ धारण किया, उस समय स्वर्ग से देवों ने आकर तीर्थंकर महापुरुष का गर्भ महोत्सव मनाया और माता-पिता की पूजा की।

नव मास व्यतीत होने के बाद रानी ऐरादेवी ने ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी के दिन याम्ययोग में प्रातःकाल के समय तीन लोक के नाथ ऐसे पुत्र रत्न को जन्म दिया। उसी समय चार प्रकार के देवों के यहाँ स्वयं ही बिना बजाये शंखनाद, भेरीनाद, सिंहनाद और घंटानाद होने लगे। सौधर्मेन्द्र ऐरावत हाथी पर चढ़कर इन्द्राणी और असंख्य देवगणों सहित नगर में आया तथा भगवान को सुमेरु पर्वत पर ले जाकर जन्माभिषेक मनाया। अभिषेक के अनन्तर भगवान को अनेकों वस्त्रालंकारों से विभूषित करके उनका 'शान्तिनाथ' यह नाम रखा, इस प्रकार भगवान को हस्तिनापुर वापस लाकर माता-पिता को सौंपकर पुनरपि आनन्द नामक नाटक करके अपने-अपने स्थान पर चले गये।

भगवान की आयु एक लाख वर्ष की थी। शरीर चालीस धनुष ऊँचा था। सुवर्ण के समान कांति थी। ध्वजा, तोरण, शंख, चक्र आदि एक हजार आठ शुभ चिह्न उनके शरीर में थे। उन्हीं विश्वसेन की यशस्वती रानी के चक्रायुध नाम का एक पुत्र हुआ। देवकुमारों

के साथ क्रीड़ा करते हुए भगवान शान्तिनाथ अपने छोटे भाई चक्रायुध के साथ-साथ वृद्धि को प्राप्त हो रहे थे। भगवान की यौवन अवस्था आने पर उनके पिता ने कुल, रूप, अवस्था, शील, कान्ति आदि से विभूषित अनेक कन्याओं के साथ उनका विवाह कर दिया।

इस तरह भगवान के जब कुमार काल के पच्चीस हजार वर्ष व्यतीत हो गये तब महाराज विश्वसेन ने उन्हें अपना राज्य समर्पण कर दिया। क्रम से उत्तमोत्तम भोगों का अनुभव करते हुए जब भगवान के पच्चीस हजार वर्ष और व्यतीत हो गये तब उनकी आयुधशाला में चक्रवर्ती के वैभव को प्रगट करने वाला चक्ररत्न उत्पन्न हो गया। इस प्रकार चक्र को आदि लेकर चौदह रत्न और नवनिधियाँ प्रगट हो गईं। इन चौदह रत्नों में चक्र, छत्र, तलवार और दण्ड ये आयुधशाला में उत्पन्न हुए थे। काकिणी, चर्म और चूड़ामणि श्रीगृह में प्रकट हुए थे, पुरोहित, सेनापति और गृहपति हस्तिनापुर में मिले थे और कन्या, गज तथा अश्व विजयार्ध पर्वत पर प्राप्त हुए थे। नौ निधियाँ भी पुण्य से प्रेरित हुए इन्द्रों के द्वारा नदी और सागर के समागम पर लाकर दी गई थीं।

चक्ररत्न के प्रकट होने के बाद भगवान ने विधिवत् दिग्विजय करके छह खण्ड को जीतकर इस भरतक्षेत्र में एकछत्र शासन किया था। जहाँ पर स्वयं भगवान शान्तिनाथ इस पृथ्वी पर प्रजा का पालन करने वाले थे, वहाँ के सुख और सौभाग्य का क्या वर्णन किया जा सकता है? इस प्रकार चक्रवर्ती के साम्राज्य में भगवान की छ्यानवे हजार रानियाँ थीं, बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा उनकी सेवा करते थे और बत्तीस यक्ष हमेशा चामरों को ढुराया करते थे। चक्रवर्तियों के साढ़े तीन करोड़ बन्धु कुल होते हैं। अठारह करोड़ घोड़े, चौरासी लाख हाथी, तीन करोड़ उत्तम वीर, अनेकों करोड़ विद्याधर और अठासी हजार म्लेच्छ राजा होते हैं। छ्यानवे करोड़ ग्राम, पचहत्तर हजार नगर, सोलह हजार खेट, चौबीस हजार कर्वट, चार हजार मटंब और अड़तालीस हजार पत्तन होते हैं इत्यादि अनेकों वैभव होते हैं।

चौदह रत्नों के नाम—अश्व, गज, गृहपति, स्थपति, सेनापति, स्त्री और पुरोहित ये सात जीवित रत्न हैं एवं छत्र, असि, दण्ड, चक्र, काकिणी, चिन्तामणि और चर्म ये सात रत्न निर्जीव होते हैं।

नवनिधियों के नाम—काल, महाकाल, पाण्डु, मानव, शंख, पद्म, नैसर्प,

पिंगल और नानारत्न ये नौ निधियाँ हैं। ये क्रम से ऋतु के योग्य द्रव्यों, भाजन, धान्य, आयुध, वादित्र, वस्त्र, हर्म्य, आभरण और रत्नसमूहों को दिया करती हैं।

दशांग भोग—दिव्यपुर, रत्न, निधि, सैन्य, भोजन, भाजन, शय्या, आसन, वाहन और नाट्य ये चक्रवर्तियों के दशांग भोग होते हैं।

इस प्रकार संख्यात हजार पुत्र-पुत्रियों से वेष्टित भगवान शान्तिनाथ चक्रवर्ती के साम्राज्य को प्राप्त कर दस प्रकार के भोगों का उपभोग करते हुए सुख से काल व्यतीत कर रहे थे। भगवान तीर्थंकर और चक्रवर्ती होने के साथ-साथ कामदेव पद के धारक भी थे।

भगवान का वैराग्य—जब भगवान के पच्चीस हजार वर्ष साम्राज्य पद में व्यतीत हो गये, तब एक समय अलंकार गृह के भीतर अलंकार धारण करते हुए उन्हें दर्पण में अपने दो प्रतिबिम्ब दिखाई दिये, उसी समय उन्हें आत्मज्ञान उत्पन्न हो गया और पूर्व जन्म का स्मरण भी हो गया, तब भगवान संसार, शरीर और भोगों के स्वरूप का विचार करते हुए विरक्त हो गये। उसी समय लौकान्तिक देवों ने आकर अनेकों स्तुतियों से पूजा स्तुति की। अनन्तर सौधर्म आदि इन्द्र सभी देवगणों के साथ उपस्थित हो गये। भगवान ने नारायण नाम के पुत्र का राज्याभिषेक करके सभी कुटुम्बियों को यथायोग्य उपदेश दिया।

भगवान का दीक्षा ग्रहण—अनन्तर इन्द्र ने भगवान का दीक्षाभिषेक करके 'सर्वार्थसिद्धि' नाम की पालकी में विराजमान करके हस्तिनापुर नगर के सहस्राम्र वन में प्रवेश किया। उसी समय ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी के दिन भरणी नक्षत्र में बेला का नियम लेकर भगवान ने पंचमुष्टि लोंच करके 'ॐ नमः सिद्धेभ्यः' कहते हुए जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली और सम्पूर्ण परिग्रह का त्याग करके ध्यान में स्थिर होते ही मनःपर्ययज्ञान प्राप्त कर लिया।

भगवान का आहार—मन्दिरपुर के राजा सुमित्र ने भगवान शान्तिनाथ को खीर का आहार देकर पंचाश्चर्य वैभव को प्राप्त किया। इस प्रकार अनुक्रम से तपश्चरण करते हुए भगवान के सोलह वर्ष व्यतीत हो गये।

भगवान को केवलज्ञान की प्राप्ति—भगवान शान्तिनाथ सहस्राम्र वन में नंद्यावर्त वृक्ष के नीचे पर्यंकासन से स्थित हो गये और पौष कृष्ण दशमी के दिन अन्तर्मुहूर्त में दसवें गुणस्थान में मोहनीय कर्म का नाश कर बारहवें गुणस्थान में

ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय का सर्वथा अभाव करके तेरहवें गुणस्थान में पहुँचकर केवलज्ञान से विभूषित हो गये और उन्हें एक समय में ही सम्पूर्ण लोकालोक स्पष्ट दीखने लगा। पहले भगवान ने चक्ररत्न से छह खण्ड पृथ्वी को जीतकर साम्राज्य पद प्राप्त किया था, अब भगवान ने विश्व में एकछत्र राज्य करने वाले मोहराज को ध्यानचक्र से जीतकर केवलज्ञानरूपी साम्राज्य लक्ष्मी को प्राप्त कर लिया। उसी समय इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने दिव्य समवसरण की रचना कर दी।

समवसरण का संक्षिप्त वर्णन—यह समवसरण पृथ्वी तल से पाँच हजार धनुष ऊँचा था, इस पृथ्वीतल से एक हाथ ऊँचाई से ही इसकी सीढ़ियाँ प्रारंभ हो गयी थीं। ये सीढ़ियाँ एक-एक हाथ की थीं और बीस हजार प्रमाण थीं। यह समवसरण गोलाकार रहता है। इसमें सबसे पहले धूलिसाल के बाद चारों दिशाओं में चार मानस्तम्भ हैं। मानस्तंभों के चारों ओर सरोवर है। पहली चैत्यप्रासाद भूमि है पुनः निर्मल जल से भरी परिखा है। फिर पुष्पवाटिका (लतावन) है। उसके आगे पहला कोट है, उसमें दोनों ओर दो-दो नाट्यशालाएँ हैं। उसके आगे अशोक, आम्र, चंपक और सप्तपर्ण का वन है। उसके आगे वेदिका है। तदनन्तर ध्वजाओं की पंक्तियाँ हैं। फिर दूसरा कोट है। उसके आगे वेदिका सहित कल्पवृक्षों का वन है। उसके बाद स्तूप, स्तूपों के बाद मकानों की पंक्तियाँ हैं। फिर स्फटिक मणिमय तीसरा कोट है। उसके आगे मनुष्य, देव और मुनियों की बारह सभायें हैं। तदनन्तर पीठिका है और पीठिका के अग्रभाग पर कमलासन पर चार अंगुल अधर ही अर्हन्त देव विराजमान रहते हैं। भगवान पूर्व या उत्तर की ओर मुँह कर स्थित रहते हैं फिर भी अतिशय विशेष से चारों दिशाओं में ही भगवान का मुँह दिखता रहता है। समवसरण में बारह सभाओं में चारों ओर प्रदक्षिणा के क्रम से पहले कोठे में गणधर और मुनिगण, दूसरे में कल्पवासिनी देवियाँ, तीसरे में आर्यिकाएँ और श्राविकाएँ, चौथे में ज्योतिषी देवांगनाएँ, पाँचवें में व्यन्तर देवांगनाएँ, छठे में भवनवासी देवांगनाएँ, सातवें में भवनवासी देव, आठवें में व्यन्तर देव, नवमें में ज्योतिषी देव, दसवें में कल्पवासी देव, ग्यारहवें में चक्रवर्ती आदि मनुष्य और बारहवें में पशु बैठते हैं।

समवसरण में भव्य जीवों का प्रमाण—भगवान के समवसरण में चक्रायुध को आदि लेकर छत्तीस गणधर थे। बासठ हजार मुनिगण और साठ हजार तीन सौ आर्यिकाएँ, दो लाख श्रावक और चार लाख श्राविकाएँ, असंख्यातों देव-देवियाँ और

संख्यातों तिर्यंच थे। इस प्रकार बारहगणों के साथ-साथ भगवान ने बहुत काल तक धर्म का उपदेश दिया।

भगवान का मोक्ष गमन—जब भगवान की आयु एक माह शेष रह गई, तब वे सम्मेद शिखर पर आये और विहार बंद कर अचल योग से विराजमान हो गये। ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी के दिन भगवान चतुर्थ शुक्लध्यान के द्वारा चारों अघातिया कर्मों का नाश कर एक समय में लोक के अग्रभाग पर जाकर विराजमान हो गये। वे नित्य, निरंजन, कृतकृत्य सिद्ध हो गये। उसी समय इन्द्रादि चार प्रकार के देवों ने आकर निर्वाण कल्याणक की पूजा की और अन्तिम संस्कार करके भस्म से अपने ललाट आदि उत्तमांगों को पवित्र कर स्व-स्वस्थान को चले गये।

ये शान्तिनाथ भगवान तीर्थंकर होने से बारहवें भव पूर्व राजा श्रीषेण थे और मुनि को आहार दान देने के प्रभाव से भोगभूमि में गये थे। फिर देव हुए, फिर विद्याधर हुए, फिर देव हुए, फिर बलभद्र हुए, फिर देव हुए, फिर वज्रायुध चक्रवर्ती हुए। उस भव में इन्होंने दीक्षा ली थी और एक वर्ष का योग धारण कर खड़े हो गये थे, तब इनके शरीर पर लताएँ चढ़ गई थीं, सर्पों ने वामी बना ली थीं, पक्षियों ने घोंसले बना लिये थे और ये वज्रायुध मुनिराज ध्यान में लीन रहे थे। अनन्तर अहमिन्द्र हुए, फिर मेघरथ राजा हुए, उस भव में इन्होंने दीक्षा लेकर घोर तपश्चरण करते हुए सोलहकारण भावनाओं का चिन्तवन किया था और उसके प्रभाव से तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर लिया था। फिर वहाँ से सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हुए, फिर वहाँ से आकर जगत् को शांति प्रदान करने वाले सोलहवें तीर्थंकर, पंचम चक्रवर्ती और बारहवें कामदेव ऐसे शान्तिनाथ भगवान हुए हैं।

उत्तरपुराण में श्री गुणभद्र स्वामी कहते हैं कि हे विद्वान लोगों! यदि तुम शान्ति चाहते हो तो सबसे उत्तम और सबका भला करने वाले श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र का निरन्तर ध्यान करते रहो। यही कारण है कि आज भी भव्य जीव शांति प्राप्ति के लिए श्री शान्तिनाथ की आराधना करते हैं।

पुष्पदन्त तीर्थंकर से लेकर सात तीर्थंकरों तक उनके तीर्थकाल में धर्म की व्युच्छित्ति हुई अतः धर्मनाथ तीर्थंकर के बाद इस भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में धर्म का विच्छेद हो गया अर्थात् हुण्डावसर्पिणी के दोष से पावपल्य प्रमाण काल तक दीक्षा लेने वालों का अभाव हो जाने से धर्मरूपी सूर्य अस्त हो गया था, उस समय शान्तिनाथ

ने जन्म लिया था। तब से आज तक धर्मपरम्परा अविछिन्नरूप से चली आ रही है। इसलिए उत्तरपुराण में श्री गुणभद्र स्वामी कहते हैं कि—

'भोगभूमि आदि कारणों से नष्ट हुआ मोक्षमार्ग यद्यपि ऋषभदेव आदि तीर्थंकरों के द्वारा पुनः पुनः दिखलाया गया था तो भी वह प्रसिद्ध अवधि के अन्त तक नहीं जा सका, तदनन्तर जो शांतिनाथ भगवान ने मोक्षमार्ग प्रकट किया, वही आज तक अखण्डरूप से बाधारहित चला आ रहा है और अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर के शासन में पंचमकाल के अंत तक वीरांगज नाम के मुनिराज तक चलता रहेगा।

जिनके शरीर की ऊँचाई एक सौ साठ हाथ है, जो पंचम चक्रवर्ती हैं और बारहवें कामदेव पद के धारी हैं, जिनके हरिण का चिह्न है, जो भादों वदी सप्तमी को माता के गर्भ में आये, ज्येष्ठ वदी चौदस को जन्म लिया और ज्येष्ठ वदी चौदस को ही दीक्षा ग्रहण किया, पौष शुक्ल दशमी के दिन केवलज्ञानी हुए पुनः ज्येष्ठ वदी चौदस को ही मुक्तिधाम को प्राप्त हुए, ऐसे शांतिनाथ भगवान सदैव हम सबको शांति प्रदान करें।

देशना दिवस—भगवान शांतिनाथ ने पौष शु. १० को हस्तिनापुर में ही दिव्य केवलज्ञान प्राप्त कर दिव्यध्वनि के द्वारा असंख्य भव्यों को धर्मामृत का उपदेश दिया है। उनका यह देशना दिवस मनाकर विश्व में "अहिंसाधर्म" का प्रचार करें।

विश्वशांति में अहिंसा का योगदान—ऐसे शांतिनाथ भगवान की आराधना, उपासना और भक्ति से तथा इनके द्वारा उपदिष्ट सिद्धान्तों के—अहिंसाधर्म के परिपालन से-प्रचार—प्रसार से ही विश्व में शांति की स्थापना होगी। आज के आतंकवाद आदि की दुर्घटनाओं में इन भगवन्तों के उपदेश की अतीव आवश्यकता है अतः हम और आप सभी मिलकर "अहिंसा परमो धर्मः" सिद्धान्त को अपनायें, यही प्रेरणा एवं मंगलकामना है।

श्री शांतिभक्ति

(हिन्दी पद्यानुवाद सहित)

पद्यानुवादकर्त्री— **गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी**

शार्दूलविक्रीडित छंद—

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् ! पादद्वयं ते प्रजाः।
हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः, संसारघोरार्णवः।।
अत्यन्तस्फुरदुग्ररश्मिनिकर-व्याकीर्णभूमण्डलो।
ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिल-च्छायानुरागं रविः।।१।।

भगवन्! सब जन तव पद युग की, शरण प्रेम से नहिं आते।
उसमें हेतु विविध दुःखों से, भरित घोर भववारिधि है।।
अति स्फुरित उग्र किरणों से, व्याप्त किया भूमंडल है।
ग्रीषम ऋतु रवि राग कराता, इन्दुकिरण छाया जल में।।१।।

क्रुद्धाशीर्विषदष्टदुर्जयविष-ज्वालावलीविक्रमो।
विद्याभेषजमन्त्रतोयहवनै-र्याति प्रशांतिं यथा।।
तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुग-स्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्।
विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा, शाम्यन्त्यहो! विस्मयः।।२।।

कुद्धसर्प आशीविष डसने, से विषाग्नि युत मानव जो।
विद्या औषध मंत्रित जल, हवनादिक से विष शांति हो।।
वैसे तव चरणाम्बुज युग, स्तोत्र पढ़े जो मनुज अहो।
तनु नाशक सब विघ्न शीघ्र, अति शान्त हुए आश्चर्य अहो।।२।।

संतप्तोत्तमकांचन क्षितिधर-श्रीस्पर्द्धिगौरद्युते।
पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्, पीडाः प्रयान्ति क्षयं।।
उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशत-व्याघातनिष्कासिता।
नानादेहिविलोचनद्युतिहरा, शीघ्रं यथा शर्वरी।।३।।

तपे श्रेष्ठ कनकाचल की, शोभा से अधिक कान्तियुत देव!
तव पद प्रणमन करते जो, पीड़ा उनकी क्षय हो स्वयमेव।।
उदित रवी की स्फुट किरणों से, ताड़ित हो झट निकल भगे।
जैसे नाना प्राणी लोचन, द्युतिहर रात्री शीघ्र भगे।।३।।

त्रैलोक्येश्वरभंगलब्धविजया-दत्यन्तरौद्रात्मकान् ।
नानाजन्मशतान्तरेषु पुरतो, जीवस्य संसारिणः।।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना, कालोग्रदावानला-
न्नस्याच्चेत्तव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम्।।४।।

त्रिभुवन जन सब जीत विजयि बन, अति रौद्रात्मक मृत्यूराज!
भव-भव में संसारी जन के, सन्मुख धावे अति विकराल।।
किस विध कौन बचे जन इससे, काल उग्र दावानल से।
यदि तव पाद कमल की स्तुति, नदी बुझावे नहीं उसे।।४।।

लोकालोकनिरन्तरप्रविसत-ज्ञानैकमूर्ते! विभो!
नानारत्नपिनद्धदंडरुचिर - श्वेतातपत्रतय!।।
त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः, शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः।
दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीमनिनदा-द्वन्या यथा कुञ्जराः।।५।।

लोकालोक निरन्तर व्यापी, ज्ञानमूर्तिमय शान्ति विभो।
नाना रत्न जटित दण्डे युत, रुचिर श्वेत छत्रत्रय है।।
तव चरणाम्बुज पूतगीत रव, से झट रोग पलायित हैं।
जैसे सिंह भयंकर गर्जन, सुन वन हस्ती भगते हैं।।५।।

दिव्यस्त्रीनयनाभिराम! विपुल-श्रीमेरुचूडामणे!
भास्वद् बालदिवाकरद्युतिहर-प्राणीष्टभामंडल!।।
अव्याबाधमचिन्त्यसारमतुलं, त्यक्तोपमं शाश्वतं।
सौख्यं त्वच्चरणारविंदयुगल-स्तुत्यैव संप्राप्यते।।६।।

दिव्यस्त्रीदृगसुन्दर विपुला, श्रीमेरू के चूड़ामणि।
तव भामंडल बाल दिवाकर, द्युतिहर सबको इष्ट अति।।
अव्याबाध अचिंत्य अतुल, अनुपम शाश्वत जो सौख्य महान्।
तव चरणारविंदयुगलस्तुति, से ही हो वह प्राप्त निधान।।६।।

यावन्नोदयते प्रभापरिकरः, श्रीभास्करो भासयं-
स्तावद्-धारयतीह पंकजवनं, निद्रातिभारश्रमम् ।।
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्-न स्यात्प्रसादोदय-
स्तावज्जीवनिकाय एष वहति, प्रायेण पापं महत्।।७।।

किरण प्रभायुत भास्कर भासित, करता उदित न हो जब तक।
पंकज वन नहिं खिलते निद्रा, भार धारते हैं तब तक।।
भगवन् ! तव चरणद्वय का हो, नहीं प्रसादोदय जब तक।
सभी जीवगण प्रायः करके, महत् पाप धारें तब तक।।७।।

शांतिं शान्तिजिनेन्द्र! शांतमनस-स्त्वत्पादपद्माश्रयात्।
संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहवः, शांत्यर्थिनः प्राणिनः।।
कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो! दृष्टिं प्रसन्नां कुरु।
त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदतः, शांत्यष्टकं भक्तितः।।८।।

शान्ति जिनेश्वर! शान्तचित्त से, शान्त्यर्थी बहु प्राणीगण।
तव पादाम्बुज का आश्रय ले, शान्त हुए हैं पृथिवी पर।।
तव पदयुग की शान्त्यष्टकयुत, स्तुति करते भक्ती से।
मुझ भाक्तिक पर दृष्टि प्रसन्न, करो भगवन्! करुणा करके।।८।।

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम्।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम्।।९।।

शशि सम निर्मल वक्त्र शांतिजिन, शीलगुण व्रत संयम पात्र।
नमूँ जिनोत्तम अंबुजदृग को, अष्टशतार्चित लक्षणगात्र।।९।।

पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिंद्र-नरेन्द्रगणैश्च।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि।।१०।।

चक्रधरों में पंचमचक्री, इन्द्र नरेन्द्र वृंद पूजित।
गण की शांति चहूँ षोडश, तीर्थंकर नमूँ शांतिकर नित।।१०।।

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टि-र्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ।
आतपवारणचामरयुग्मे, यस्य विभाति च मंडलतेजः।।११।।

तरु अशोक सुरपुष्पवृष्टि, दुंदुभि दिव्यध्वनि सिंहासन।
चमर छत्र भामंडल ये अठ, प्रातिहार्य प्रभु के मनहर।।११।।

तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं, शांतिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मह्यमरं पठते परमां च।।१२।।

उन भुवनार्चित शांतिकरं, शिर से प्रणमूँ शांति प्रभु को।
शांति करो सब गण को मुझको, पढ़ने वालों को भी हो।।१२।।

येभ्यर्चिता मुकुटकुंडलहाररत्नैः।
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः।।
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपाः।
तीर्थंकराः सततशांतिकराः भवंतु।।१३।।

मुकुटहारकुंडल रत्नों युत, इन्द्रगणों से जो अर्चित।
इन्द्रादिक से सुरगण से भी, पादपद्म जिनके संस्तुत।।
प्रवरवंश में जन्में जग के, दीपक वे जिन तीर्थंकर।
मुझको सतत शांतिकर होवें, वे तीर्थेश्वर शांतीकर।।१३।।

संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानां।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः।।१४।।

संपूजक प्रतिपालक जन, यतिवर सामान्य तपोधन को।
देशराष्ट्र पुर नृप के हेतू, हे भगवन्! तुम शांति करो।।१४।।

क्षेमं सर्वप्रजानां, प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः।
काले काले च सम्यग्वर्षतु, मघवा व्याधयो यांतु नाशं।।
दुर्भिक्षं चौरिमारी, क्षणमपि जगतां मा स्म भूज्जीवलोके।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं, प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि।।१५।।

सभी प्रजा में क्षेम नृपति, धार्मिक बलवान जगत् में हो।
समय-समय पर मेघवृष्टि हो, आधि व्याधि का भी क्षय हो।।
चौर मारि दुर्भिक्ष न क्षण भी, जग में जन पीड़ा कर हो।
नित ही सर्व सौख्यप्रद जिनवर, धर्मचक्र जयशील रहो।।१५।।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः, केवलज्ञानभास्कराः।
कुर्वन्तु जगतां शांतिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः।।१६।।

घातिकर्म विध्वंसक जिनवर, केवलज्ञानमयी भास्कर।
करें जगत में शांति सदा, वृषभादि जिनेश्वर तीर्थंकर।।१६।।

अंचलिका

इच्छामि भंते! संतिभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं पंचमहा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं, चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं, बत्तीसदे-

वेंदमणिमउडमत्थय-महियाणं, बलदेववासुदेवचक्कहर-रिसिमुणिजइअणगारोव-गूढाणं, थुइसयसहस्सणिलयाणं उसहाइवीरपच्छिम-मंगलमहा-पुरिसाणं, णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

हे भगवन्! श्री शांतिभक्ति का, कायोत्सर्ग किया उसके।
आलोचन करने की इच्छा, करना चाहूँ मैं रुचि से।।

अष्टमहा प्रातिहार्य सहित जो, पंचमहाकल्याणक युत।
चौतिस अतिशय विशेष युत, बत्तिस देवेन्द्र मुकुट चर्चित।।

हलधर वासुदेव प्रतिचक्री, ऋषि मुनि यति अनगार सहित।
लाखों स्तुति के निलय वृषभ से, वीर प्रभू तक महापुरुष।।

मंगल महापुरुष तीर्थंकर, उन सबको शुभ भक्ती से।
नित्यकाल मैं अर्चूं पूजूँ, वंदूँ नमूँ महामुद से।।

दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, हो मम बोधिलाभ होवे।
सुगति गमन हो समाधिमरणं, मम जिनगुण सम्पति होवे।।

भगवान कुंथुनाथ एक दृष्टि में

जन्मभूमि — **हस्तिनापुर (जि. मेरठ) उत्तर प्रदेश**
पिता — महाराजा सूरसेन
माता — महारानी श्रीकांता
वर्ण — क्षत्रिय
वंश — कुरुवंश
देहवर्ण — तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह — बकरा
आयु — पंचानवे हजार वर्ष
अवगाहना — एक सौ चालीस हाथ
गर्भ — श्रावण कृ.१०
जन्म — वैशाख शु. १
तप — वैशाख शु. १
दीक्षा-केवलज्ञान वन एवं वृक्ष — सहेतुक वन एवं तिलक वृक्ष
प्रथम आहार — हस्तिनापुर के राजा धर्ममित्र द्वारा (खीर)
केवलज्ञान — चैत्र शु. ३
मोक्ष — वैशाख शु. १
मोक्षस्थल — सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर — श्री स्वयंभू आदि ३५
मुनि — साठ हजार
गणिनी — आर्यिका भाविता
आर्यिका — साठ हजार तीन सौ पचास
श्रावक — दो लाख
श्राविका — तीन लाख
जिनशासन यक्ष — गंधर्व देव
यक्षी — जया देवी

भगवान कुंथुनाथ वर्तमान वीर नि.सं. २५३५ से पाव पल्य और ६५,८६,५३५ वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

भगवान अरनाथ एक दृष्टि में

जन्मभूमि — **हस्तिनापुर (जिला मेरठ) उत्तर प्रदेश**
पिता — महाराजा सुदर्शन
माता — महारानी मित्रसेना
वर्ण — क्षत्रिय
वंश — कुरुवंश
देहवर्ण — तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह — मछली
आयु — चौरासी हजार वर्ष
अवगाहना — एक सौ बीस हाथ
गर्भ — फाल्गुन कृ.३
जन्म — मगसिर शु.१४
तप — मगसिर शु. १०
दीक्षा-केवलज्ञान वन एवं वृक्ष — सहेतुक वन एवं आम्र वृक्ष
प्रथम आहार — चक्रपुर के राजा अपराजित द्वारा (खीर)
केवलज्ञान — कार्तिक शु. १२
मोक्ष — चैत्र कृ. अमावस्या
मोक्षस्थल — सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर — श्री कुंभार्य आदि ३०
मुनि — पचास हजार
गणिनी — आर्यिका यक्षिला
आर्यिका — साठ हजार
श्रावक — एक लाख साठ हजार
श्राविका — तीन लाख
जिनशासन यक्ष — महेन्द्र देव
यक्षी — विजया देवी

भगवान अरनाथ वर्तमान वीर नि.सं. २५३५ से १० अरब ६५,८६,५३५ वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

श्री शांतिजिन स्तोत्र

श्री शांति प्रभो! शरणागत जन, शान्ती के दाता कहें तुम्हें।
यह धन्य हुई हस्तिनापुरी, जहाँ राज्य किया शांतीश्वर ने।।
विश्वसेन पिता ऐरादेवी, माता का अतिशय पुण्य खिला।
भादों वदि सप्तमि के प्रभु को, गर्भागम का सौभाग्य मिला।।१।।

शुभ ज्येष्ठ वदी चौदस आई, शांतीश्वर ने जब जन्मलिया।
सुरगृह में बाजे बाज उठे, इन्द्रों ने मस्तक नमित किया।।
त्रिभुवन में शांति लहर दौड़ी, नरकों में कुछ क्षण शांति हुई।
गिरि मंदर पर अभिषेक हुआ, उत्सव में भू नभ एक हुई।।२।।

शांतीश प्रभू चक्रीश बने, षट्खंड मही का भोग किया।
शुभ ज्येष्ठ वदी चौदस के दिन, बस चक्ररत्न को त्याग दिया।।
इक शतक साठ कर तनु सुन्दर, आयू इक लाख वर्ष प्रभु की।
तपनीय कनक सम कांति विभो! मृग लांछन से जाने सब ही।।३।।

प्रभु ध्यान चक्र को ले करके, मोहारि नृपति को मारा था।
वर पौष सुदी दशमी के दिन, भव्यों को मिला सहारा था।।
षोडश तीर्थंकर कामदेव, पंचम चक्री जय पदधारी।
वर ज्येष्ठ वदी चौदस के दिन, त्रिभुवन साम्राज्य मिला भारी।।४।।

प्रभु नर्क निगोद और विकलत्रय, दुःखों को सहता आया हूँ।
तिर्यंच मनुज सुर गतियों के, दुःखों को सहता आया हूँ।।
नौ महिने तक मैं माता के, उर में औंधे मुँह लटका था।
अति घृणित अशुचि में पड़ा-२, नहिं किंचित् हिल डुल सकता था।।५।।

वहाँ श्वास घुटा करता प्रतिक्षण, नहिं पलभर आँखें खोल सका।
अति घोर कष्ट सहता रहता, नहिं किंचित् भी कुछ बोल सका।।
जैसे तैसे कर जन्म लिया, उस काल प्रभो! जो कष्ट हुआ।
संख्यातों जिह्वा कह न सकें, फिर कैसे भी मैं कहूँ हहा।।६।।

बचपन में भी मैं मूक रहा, जो जो दुख भोगे हैं प्रभुवर।
मैं भूल गया बस फूल गया, कुछ क्षण तरुणाई को पाकर।।

अब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, के दुख से भी घबराया हूँ।
तुम शांती के दाता भगवन्! अतएव शरण में आया हूँ।।७।।

सम्यग्दर्शन औ ज्ञान चरण, ये रत्नत्रय निधि मुझे मिली।
तनु से ममता भव बीज अहा! सम्यग्दृक् कलिका आज खिली।।
हे शांतिनाथ! मैं नमूँ सदा, बस भक्ती का फल एक मिले।
नहिं बार-बार मैं जन्म धरूँ, कैवल्य 'ज्ञानमती' शीघ्र मिले।।८।।

भजन

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज-मेला मड़व्या दा.....

अहिंसा की जय हो-२, सत्यमेव जयते।
अहिंसा की सबको-२, शांति और सुख दे।।टेक.।।
सारे जग में शांति और सुख इसके ही बल पर हो,
अहिंसा की जय हो-२।।टेक.।।

जब-जब धरती पर अन्याय तथा हिंसा भड़की है।
तब-तब सन्त महापुरुषों से धन्य हुई धरती है।।
इसीलिए सर्वदा न्याय की होती रही विजय है.....अहिंसा की जय हो....।।१।।

इन्सानों में ही हैवान का रूप छिपा रहता है।
उनमें ही भगवान का सच्चा रूप कभी दिखता है।।
मानव में मानवता का गुण जैसे बने प्रगट हो...अहिंसा की जय हो।।२।।

ज्ञानमती माता का आशीर्वाद है राष्ट्रपति को।
प्रतिभा पाटिल जी आईं, सम्मेलन उद्घाटन को।।
जिओ और जीने दो यह "चंदनामती" सुखप्रद हो....अहिंसा की जय हो।।३।।

भजन

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज —रामजी की सेना चली.....

जय हो शांतिनाथ-२, जय हो शांतिनाथ-२, जय शांतिनाथ, जय शांतिनाथ-२।
विश्व में शांति हो-२, एक नई क्रांति हो-२, देश का विकास करो,
जग में प्रकाश भरो-२।।टेक.।।

जय हो शांतिनाथ-२.....
अहिंसा हो साथ में-२, संगठन हो हाथ में-२, अपना प्रयास करो,
जग में प्रकाश भरो-२।।टेक.।।

धर्म अहिंसा का पावन, सन्देश जहाँ से गूंजा था,
सन्देश जहाँ से गूंजा था।
हस्तिनापुर की वह धरती, इंद्र भी आकर छूता था,
इंद्र भी आकर छूता था।।
उस रज को जब ज्ञानमती, माताजी ने स्पर्श किया,
माताजी ने स्पर्श किया।
अपनी त्याग तपस्या से, इस धरती को स्वर्ग किया,
इस धरती को स्वर्ग किया।।
स्वर्ग जैसी शांति हो-२, मन में नहीं भ्रान्ति हो-२, देश का विकास करो,
जग में प्रकाश भरो-२।।
जय हो शांतिनाथ-२, जय हो शांतिनाथ-२ ।।१।।

यह नगरी वह तीरथ है, जहाँ तीर्थंकर त्रय जन्मे थे,
तीर्थंकर त्रय जन्मे थे।
यह संस्कृति की कीरत है, जहाँ चक्रवर्ति भी रहते थे,
चक्रवर्ति भी रहते थे।।
रक्षाबंधन व महाभारत की घटनाएँ भी घटीं जहाँ,
घटनाएँ भी घटीं जहाँ।
"चंदनामती" बस धर्म न्याय को, सदा विजयश्री मिली जहाँ,
सदा विजयश्री मिली जहाँ।।
सबके मन में शांति हो-२, कहीं न अशांति हो-२, ऐसा प्रयास करो,
जग में प्रकाश भरो-२।।
जय हो शांतिनाथ-२, जय हो शांतिनाथ-२ ।।२।।

भजन

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज-दिल लूटने वाले.....

हे विश्वशांति के उपदेष्टा, श्री शांतिनाथ प्रभु तुम्हें नमन।
हे धर्म अहिंसा के नेता, श्री शांतिनाथ प्रभु तुम्हें नमन।।टेक.।।

उपकार करूँ सारे जग का, यह भाव हृदय में आता है।
दुःखियों को देख हृदय रोता, मन करुणा से भर जाता है।।
दो शक्ति मुझे मैं सब जग का, दुख दूर कर सकूँ कभी स्वयं।
हे विश्वशांति के उपदेष्टा, श्री शांतिनाथ प्रभु तुम्हें नमन।।१।।

भारत इक था गुलजार चमन, हिंसा ने उसको नष्ट किया।
सच्चाई के इस उपवन को, स्वार्थी तत्वों ने भ्रष्ट किया।।
ऐसी शक्ति हो प्रगट सभी में, विश्वशांति से करूँ चमन।
हे विश्वशांति के उपदेष्टा, श्री शांतिनाथ प्रभु तुम्हें नमन।।२।।

भगवान न यदि बन सकूँ तो मैं, इंसान की श्रेणी पा जाऊँ।
यदि साधु नहीं बन सकूँ तो मैं, सज्जन की श्रेणी पा जाऊँ।।
है भाव यही 'चंदनामती', खिल जावे भारत का उपवन।
हे विश्वशांति के उपदेष्टा, श्री शांतिनाथ प्रभु तुम्हें नमन।।३।।

भजन

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज-तेरी दुनिया से दूर.....

हस्तिनापुर मशहूर, इसकी ख्याति दूर-दूर,
शान्तिनाथ स्वामी।।टेक.।।
शास्त्र पुराणों में, इस धरती की कहानी सुनी जाती थीं,
सुनी जाती थी और पढ़ी जाती थीं।
शान्तिनाथ, कुंथु, अरह जिनवर की, कथाएँ आती थीं,
कथाएँ आती थीं, व्यवस्थाएँ आती थीं।।
तीनों कर्मों को चूर, गए मुक्तिपथ की ओर
शान्तिनाथ स्वामी।।१।।
आदिनाथ प्रभु का प्रथम आहार इसी नगरी में हुआ,
नगरी में हुआ, इसी धरती पे हुआ।।
पर्व सलूनो, महाभारत का भी युद्ध इसी धरती पे हुआ,
धरती पे हुआ, इसी धरती पे हुआ।।
इतिहासों में मशहूर, लेकिन ख्याति से थी दूर,
शान्तिनाथ स्वामी।।२।।
जब से हस्तिनापुर में ज्ञानमती माँ के चरण हैं पड़े,
चरण हैं पढ़े, इनके चरण पड़े।
तब से सारे जंगल, उद्यान बन करके, सम्मान से बढ़े,
सम्मान से बढ़े अपनी शान से खड़े।।
ज्योति फैली दूर-दूर, इसकी कथा मशहूर,
शान्तिनाथ स्वामी।।३।।
जम्बूद्वीप रचना भूगोल व जिनमंदिर का रूप बन गई,
रूप बन गई, उभय रूप बन गई।
कमल मंदिर, ध्यान मंदिर, और तेरहद्वीपों की रचना बन गई,
रचना बन गई, सुन्दरता बढ़ गई।।
"चन्दना" गुणों से पूर, गजपुर नगरी है मशहूर,
शान्तिनाथ स्वामी।।४।।

आरती श्री शांतिनाथ भगवान की

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

आरति करो रे,
श्री शांतिनाथ सोलहवें जिन की, आरति करो रे।।टेक.।।
प्रभु आरति से सब जन का, मिथ्यात्व तिमिर नश जाता है।
भव भव के कल्मष धुलकर, सम्यक्त्व उजाला आता है।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
श्री मोहमहामदनाशक प्रभु की, आरति करो रे।।१।।

प्रभु ने जन्म लिया जब भू पर, नरकों में भी शांति मिली।
ऐरा देवी के आंगन में, आनन्द की इक लहर चली।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
जय विश्वसेन के प्रिय नन्दन की, आरति करो रे।।२।।

शांतिनाथ निज चक्ररत्न से, षट्खंडाधिपती बने।।
इस वैभव में शांति न लख कर, रत्नत्रय के धनी बने।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
श्री शांतिनाथ पंचम चक्री की, आरति करो रे।।३।।

जो प्रभु के दरबार में आता, इच्छित फल को पाता है।
आत्मशक्ति को विकसित कर, 'चंदनामती' शिव पाता है।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
मुक्तिश्री के अधिनायक प्रभु की, आरति करो रे।